श्रीपरमात्मने नमः ।

स्वर्गीय कविवर बख्तावरमलजी रतनलालजीकृत

दानकथा ।

मंगलाचरण ।

दोहा ।

श्रीवृषभादि जिनेशजी, जगतगुरू शिवकंत ।
तिन नमि पात्र सुदानकी, कथा कहूं रसवंत ॥

गीता छंद ।

श्रीमान जिनवरचंदके, आननथकी उपजत भई
सो परम पावन भारती, मोहि ज्ञाननिधि देओ सही
अरु जो गुरू निरग्रंथ शिव, दाता नमूं पद जासके
सम्यक्तदर्शन ज्ञान चारित्त, हैं परिग्रह तासके ॥
तिनही कहो है दान औषध, अभयशास्त्र अहारजी
सो तीन जगमें सार है दीयें लहै फल सार जी ॥

---

१ मुखसे । २ सरस्वती माता ।

जिम शुद्ध भूमविषै वटकबीज सु बोयतैं बहुविधि फिरै
तिमही सुपात्रनको दियो बहु दान सुखको विस्तरै

सवैया इकतीसा (मनहरन)

जैसे एक बांपीको सलिल अनेकरूप, देत रंग न्यारे न्यारे कारनकौं पायकैं। केलमें कपूर होत नीवमें कटुक जान, ईखमाहिं मिष्टरस देखौ चित लायकैं॥ तैसे शुभ पात्रनको दियो जो आहारदान, देत सुख अतुल सु कहै कौन गायकैं। सो ही जो कुपात्रनको दियो कटुफल होत, तातैं जैन पात्रनको दीजे हरषायकै॥

दोहा।

एक सुपात्रविषै दियौ, दान महाफल देय।
और हजारनके दियैं, कारज नाहिं सरेय॥
जैसे सुरतरु एक ही, मनवांछितदातार।
और हजारों वृक्षतैं, कारज कौन निहार॥

चौपई [१५ मात्रा]

सोइ पात्र हैं तीन प्रकार। उतकृष्ट श्रीमुनि-

---

* बावड़ी।

वर हैं सार। मध्यम श्रावक सम्यकवंत। अव्रतस-म्यकदृष्टी अंत॥ ये ही जोग जान बडभाग। औरनकौ तजिये अनुराग। इनके विषै दियौ जो दान। निश्चयकरि सुख देय महान॥ कही तासकी महिमा सोय। हमसेती किम बरनन होय। पात्रदानफलतैं यहं जीव। निरमल सु-खसौं रहै सदीव॥ शर्म नाम किसकौ है मीत। कीर्ति कांति अरु रूप पुनीत। निरमल तन अद्भुत सौभाग। पुन्यवान जिनमतमें राग॥ सुखतरुवरको बीज निहार। ऊंचे कुलमैं ले अ-वतार। सुवरन औ धनधान्य उपान। पुत्र पौत्र तिय भोग महान॥

दोहा।

इंद्रचंद्रनागेंद्रपद, देवै ये ही दान।
तातैं नितही सुजन जन, दीजै वित्तसमान॥

पद्धरी।

जे भक्तिसहित देवैं सुदान। ते सज्जन जन संगत लहान। दिनोदिन कल्यान नवीन देत।

क्रम कर वह शिवपुरराज लेत। श्रीआदिनाथवत भव्य जान। दियौ वज्रजंघके भव सुदान। तातैं नितप्रति चउविध अनूप। धरौ त्यागविषैं बुधि हर्षरूप॥ जिन भव्यन देकर दान सार। फल पायो इस अवनी मंझार। तिन नाम कहनको को महान। श्रीजिनवरचंद्र विना न जान। अरु पूरव आचारज सुरीत। तिन नाम कथित आये पुनीत। अब अवसर पाय कहूं सुनाय। निज बुद्धियुक्त सुन चित्त लाय। श्रीसेनं और महासेन जान। वर वृषभसेन शोभायमान। बाराह लखौ श्रीकौंडरेस। ये भये प्रकट दाता विशेष॥

छप्पय।

सिरीसेन आहार दान पात्रनकौं दीनौं।
भेषज देकर वृषभसेन मुनि तन सुचि कीनौं॥
कौंडरेशने शास्त्रदान दीनौं चितलाई।

---

१ उक्तं च—श्रीषेणो वृषसेनः कौण्डेशः सूकरश्च दृष्टांताः।
वैयावृत्यस्यैते चतुर्विकल्पस्य मन्तव्याः॥ १८॥

सूकरने दे अभैदान निजहित उपजाइ ।
अब तिनही संक्षेपतैं, कथा कहूं मैं गायकैं ।
क्रमकरकेभविसुनलीजिये मनवचकायलगायकैं

अथ आहारदान कथा ।

चौपाई ।

पहिले ही श्रीषेण नरिन्द । भुक्तिदान दीनौं गुणवृन्द । ताकर शांतितने करतार । उपजे शांतिनाथ अवतार ॥ भो स्वामिन् सोलम तीर्थेश । जैवन्ते वरतौ जगतेश । तुमरौ चरित जगतमें सार । भुक्ति मुक्तिको है दातार ॥ सोई श्रेष्ठचारित्र पवित्त । हमको शांति अर्थ हो नित्त । कौडौं सुखदाता यह कथा । धरौ सुमन हिरदे सर्वथा ॥ सबै दीपमधि जम्बूदीप । मानो जगमें लसत महीप । ताके दक्षिणभागमंझार । भरतक्षेत्र है धनुषाकार ॥ श्रीजिनभाषित धर्म पवित्र । ताकर पूरित है वो क्षेत्र । तामधि मलयदेश अभिराम । नगर रतनसंचयपुर नाम ।

तासविषैं परजा-रिछपाल । सिरीसेन नामा न-रपाल । धीर वीर दाता अधिकाय । सब अरि नासे बुद्धिपसाय ॥ दीरघदर्शी किरियावन्त । धर्मविषैं चित धरै अत्यंत । पुन्यउदयतैं भोगत भोग । निज गृहमें पंचेंद्री जोग ॥

दोहा ।

ता नृपके होती भई, जुग तिय रूपनिधान ।
सिंघनंदिता नाम इक, आनन्दिता सुजान ॥
तिन दोनोंके सुत भये, शशि रविकी उनहार ।
इंद्र उपेंद्र सु नाम है, सूरवीर अधिकार ॥
इत्यादिक परिवारजुत, सिरीसेन महराज ।
पुन्यउदय निजधाममें, तिष्ठत सब सुख साज ॥

रोला छंद ।

तिस ही नगरी विषैं सात्यकी विप्र बुद्धिधर ।
जंधा नामा नारि सत्यभामा पत्नीवर ॥
तैसे ही इक अचलग्राममें विप्र रहत है ।
धरनीजट तिस नाम वेदवेदाङ्गसहित है ॥
ताके अग्निला नारि पुत्र जुग सुन्दर प्यारे ।

इन्द्रभूत औ अगनिभूत ये नाम सुधारे ॥
कपिल नाम इक दासीसुत, तिसके घरमाहीं ।
पूरवउदैपसाय बुद्धि तीक्षण अधिकाहीं ॥

दोहा ।

नित प्रति दुज निज सुतनको, जवै भनावै वेद ।
सुनकर दासीतनुज यह, उर धारे विन खेद ॥
निज धीके परसादतैं, पढौ वेद वेदांत ।
पंडित ह्वै तिष्ठत भयौ, धारे रूप अनंत ॥

सोरठा

करौ जतन जन कोय, बुद्धि कर्मअनुसारिणी ।
तातैं पण्डित होय, विना सिखाये जगविषैं ॥

पद्धरी ।

तब सब ही दुज मन क्रोध ठान । धरनी-जटतैं इम वच बखान ॥ दासीसुतको विद्या समोह । दीनी अद्भुत नहिं जोग तोह ॥ २४ ॥ ऐसे तिनके वच सुन तुरंत । मनमाहीं भय धरके अत्यंत ॥ ताकौं गृहतैं दीनौं निकास । तब कपिल चलौ ह्वै कर उदास ॥ २५ ॥ पहुंच्यौ

रतनपुर द्विज सुभेष । तब त्याके मोहित याहि पेख ॥ बहु पंडित लख निजधाम लाय । सतभामा तनुजा दई व्याह ॥ ३६ ॥ अब कपिल सत्यभामा लहाय । राजादिकतैं बहु मान पाय ॥ बहु वेदतनो करतो बखान । सुखसे तिष्ठत आनंद ठान ॥ ३७ ॥

दोहा ।

इह विधितैं बहु दिन गये, नारि भई रितुवंत ।
कुचारित्र करनेथकी, वांछा करी अत्यंत ॥ ३८ ॥
इहविधि सतभामा लखौ, मनमें कियो विचार ।
यह पापी किसको तनुज, संशय इमि चितधार ॥

सोरठा ।

प्रीतिरहित यह होय, तिष्ठी अपने धाममें ।
होनहार सो होय, यह विचार करती थकी ॥ ४० ॥

चौपाई ।

अब धरनीजट ब्राह्मण जोय । पाप उदय दारिद जुत होय ॥ कपिल विभव सुनके अधिकार । आवत भयौ तासके द्वार ॥ ४१ ॥ याकौं ल-

खिकर कपिल तुरंत । चितमाहीं बहु रोस गहंत ॥ बाहरसेती धर अनुराग । खडो होय ताके पग-लाग ॥ ४२ ॥ ऊंचे विष्टरपे बैठाय । सुश्रूषा कीनी बहुभाय ॥ फिर पूछी मम भ्रात रु मात । सुखसौं हैं तुम भाषो तात ॥ ४३ ॥ इमि कह लेकर उष्ण सुवार । याको न्होन करायो सार ॥ बहुरि करै जो चित अहलाद । ऐसो भुक्त दियो खीराद ॥ ४४ ॥ बहुत दिये वस्त्रादि मनोग । कहत भयो सुनिये सब लोग ॥ यह दुज पंडित मेरो तात । ऐसी कुत्सित भाषी बात ॥ ४५ ॥ तब वो दुज दारिद्रपसाय । याकौं सुत कहके बतलाय ॥ तातैं दारिदको धिक्कार । काज अ-काज गिने न लगार ॥ ४६ ॥ इह विधि बीते कई एक मास । तब यह सतभामा गुणरास ॥ धरनीजटको बहु धन दीन । बुलवाके एकांत प्रवीन ॥ ४७ ॥ भक्तिसहित इमि पूछी बात । सत्य कहो तुम याके तात ॥ याकी चेष्टा मलिन अपार । नहिं प्रतीत मम चित्तमंझार ॥ ४८ ॥

ऐसे सुनकर द्विज तिह घरी। घर जानेकी इच्छा धरी ॥ कपिल मती धरके बहुरोष। और द्रव्य को पायौ कोष ॥ ४९ ॥ तासैं सब विरतांत ब-खान। झट निज गृहको कियो पयान ॥ इम सुनि सतभामा दुख लई । पृथ्वीपतिके सरनै गई ॥ ५० ॥

दोहा।

राजाने पुत्री करी, राखी अपने धाम ।
कपिल कुबुद्धी दुष्टमति, कपटमूल लख तात ५१
नरनायक चित रोष धरि, स्याम करौ तिस भाल।
खर चढाय निज देशतैं, काढ दियो ततकाल ५२
राजनको यह धर्म है, करै सृष्टिप्रतिपाल ।
दुष्टनको निग्रह करै, नातरु होय कुचाल ॥ ५३ ॥

कवित्त ।

एक दिना नृपपुन्यजोगतैं, तपरूपी रतन-नकी खान । जुग चारनमुनि आये नभतैं, मानौ आये जुग शशि भान ॥ वर आदित्य-गती ऋषिनायक, दूजे नाम अरिंजय जान ।

तिनको देख उठो नरनायक, पडगाहे मन भक्ति सुठान ॥ ५४ ॥ सप्तगुणनिजुत हर्षसहित दियो, स्वच्छ दान तिनकों तिहिं बार । पंचाचरज भये अम्बरतैं, देवन कीनो जैजैकार ॥ अहो भ्रात यह सत्य जगतमैं, दानतनी महिमा अतिकार । तातैं क्या क्या शुभ न लहत हैं, सब्ब हि सुलभ हो तिस आगार ॥

दोहा ।

अब कितने इक दिनन तक, सिरीसेन नरराय ॥
पुन्यउदै सुख भोगतौ, फिर त्यागी निजकाय ॥

अडिल्ल ।

खंड धातुकी पूरब मेरु महान है । उत्तरकुरु जहं भोगभूमि सुखधान है । तहं उपज्यौ वडभाग भोग भोगत घने । तीन पल्यकी आयु कौन महिमा भने ॥ अहो कौन यह अचरजकारी वात है । साधुनकी संगतितैं शिवपुरपात है । तातैं संगत करौ भले जनकी सदा । दुर्जनको परसंग न कीजै भवि कदा ॥

छन्द (१४ मात्राका)

अब नृपकी दोनौं नारी । जो प्राणोंतैं अति प्यारी । अरु सतभामा जो थाई, तीनौंने भीच लहाई ॥ ५९ ॥ करके अनुमोदन भारी । लही भोगभूमि सुखकारी ॥ दश विधिके तरु सुखदाई । तिनकौं भोगे अधिकाई ॥ ६० ॥

छंद (१४ मात्रा)

सो वो थानक दुतिवंता, तहं रोग शोक नहिं चिंता । दारिद्र कभी नहिं आवै, औ अ-ल्पायू नहिं पावै ॥ ६१ ॥ सब आपसमें हित-कारी, नहिं अरिकौ जहं परचारी । नहिं शीत उष्णकी बाधा, तहँ दुद्धतनौं न उपाधा ॥ ६२ ॥ नहिं सेवक स्वामी कोई, सब ही आरज तहँ लोई । जनमादिमरनपरयंते, नाना विधि सुख भोगंते ॥ ६३ ॥

दोहा ।

दानतने परभावतैं, उपजत हैं नर भाम ।

---

१ उक्तं च—मद्यतुर्यविभूषास्रग्ज्योतिदीपग्रहांगकाः ।
भोजनपात्रवस्त्रांगा दशधा कल्पपादपाः ॥

सरलचित्त कोमल अधिक, हैं तिनके परिनाम॥
तहँतैं चय कर देवगति, पावत हैं बडभाग।
यातैं उत्तम पात्रकौं, दान करौ जुतराग॥

चौपाई।

सो अब सिरीसेनेश्वर[1] एह, पांचौं अच्छनके सुख सेय, भोगसहित त्यागी निजकाय, फिर ऊंचे ऊंचे पद पाय। इस ही भरतक्षेत्रके बीच, हस्तनागपुर साहित मरीच। तामें विश्वसेन भूपार, ऐरादेवी सुन्दर नार। तिनके पुत्र भये जगतेश, सोलम तीर्थंकर परमेश। चक्रवर्तिपद पाय अनंग, बहुरि मोक्ष सुख लहौ अभंग।

काव्य [रोला]

देखो भवि जो भुक्ति देत हैं, श्रद्धामन करके,
ते दोऊ लोकमंझार, शर्म पावत अघ हरके।
यातैं भविजन दान, देहु पात्रनिके तांई,
अपनी शक्तिसमान, जासु फल सुरशिवदाई।

---

१ श्रीषेणका जीव।

गीता छन्द ।

श्रीकुन्दकुन्द सुवंशमें वर, मूलसंघविषैं जये,
निरमल रतनत्रयकर विभूषित, मल्लिभूषण गुरु
भये, तिन शिष्य जानौं ब्रह्म नेमीदत्तने भाषी कथा,
अब तिनौंके अनुसार लेकर कथन कीनौं सर्वथा

दोहा ।

दान सुपात्रनकौं दियो, सिरीसेन नरराय ।
ताकर तीर्थंकर भये, षोडसमे सुखदाय ॥
सो स्वामी संताप मम, दूर करौ तत्काल ।
शांति अर्थ हूजे प्रभू, यातैं नाऊं भाल ॥

इति आहारदान कथा ।

अथ औषधिदानकथा ।

मंगलाचरण ।

रोला ।

वंदूं श्रीजिनचंद, और सरसुति जगमाता ।
गुरु निरग्रंथ दयाल, नमूं जे हैं जगत्राता ॥
वरनूं औषधिदानतनी, शुभकथा अबारी ।

तिस दीरघफल आयु, लहै जन जगतमंझारी
बहुरि लहै चित स्वास्थ, कुष्ट आदिक सब नाशै
होय निरोग शरीर, सदा आनंद प्रकाशै ।
पावै धन अरु धान्य, संपदा वपु निर्मल अति।
बहुरि लहै शिवथान, देय जो भेषज नितप्रति ॥

दोहा ।

सो यह औषधदान शुचि, दीजे पात्रनहेत ।
दयासहित भ्रम टारकैं, जो पावौ सुखखेत ॥
जिन जिन जीवन फल लहौ, भेषजदान सुदेय
तिनकी महिमा प्रभु विना, जगमें को वरनेय ।

पद्धरी ।

अब इसहीके सनबंधमझार । श्रीवृषसेनाको चरितसार । पूरवअनुसार कहूं बनाय । कल्याणहेत सुनो चित्त लाय ॥ इस अन्तर ये ही भरतक्षेत्र । श्रीजिनके जन्मथकी पवित्र । तहं कमलजुक्त सुन्दर विशेष । जनपद नामा है एक देश ॥ कानेरी पत्तन तासु मद्ध । नृप उग्रसेन नामा प्रसिद्ध । सब विद्यामंडित अव-

लिपाल । परजाहितकारी सुगुनमाल ॥ ताहीं नगरीमें सेठ एक । तिस नाम धर्मपति जुतवि-वेक । जिनचंदचरनराजीव[1] जंह । षटपद[2] सम तिनपै रमै एह ॥ तिनके बड भागिनि शील-वान । धनश्री सेठानी श्रीसमान । गुणरूप रत-नकी धरनहार । पतिकौं प्यारी आनंदकार ॥

दोहा ।

तिनके पूरव पुन्यतैं सुता भई दुतिवान ।
मानों उज्वल गेहमें, कीरति ही उपजान ॥

सोरठा ।

लावन रूप अपार, नाम वृषभसेना धरौ ।
रतिरम्भादिक नार, जिस लखकैं लज्जा धरैं ॥
रूपवती तिस नाम, पालै धात्री[3] प्रीततैं ।
नित मंजन अभिराम, याहि करावै जतनतैं ॥

गीता छन्द ।

इस वृषभसेनाके न्हवनपयतैं[4] भरौ इक गरत ही ।
ता मध्य कूकर रोगपीडित, आन नित प्रति

---

१ जिनेन्द्रके चरणकमल । २ भौंरा । ३ धाय । ४ स्नानके पानीसे ।

परत ही ॥ तातैं विमल तन भयो जाकौ, सर्व पीडा नस गई । इम देखके तब धाय विस्मय-वंत चितमाहीं भई ॥ मनमें विचारी यह कुमा-री, पुन्यवंत महान है । इस न्हौनको जल रोगनाशक सुधाकी उनमान है ॥ तिस ही सलिलको बूंद ले, निज मातको यानैं दई । द्वादश वरसतैं अंध थी तिस आंजतैं चख[1] खुल गई ॥

चौपाई

तब ही रूपवती यह धाय । जननीके चख लख हरषाय ॥ तिस अस्थानतनौं शुभ तोय । भेषज सम ताको अविलोय ॥ अवनीमें कीनौ विख्यात । या प्रभावतैं सब दुख जात ॥ नेत्र कुक्षि सिर-रोग नसन्त । कुष्ट जहर वृर्ण[2] सर्व हरन्त ॥ या अंतर इक दिन नरईश । नर-पिंगल नामा मंत्रीश । ताकौं घनपिंगलनृपदेश भेजौ चमू[3] जु देय विशेष ॥ जब यह पहुंचौ

---

१ नेत्र । २ फोड़ा । ३ सेना ।

जाय तुरंत। तानैं जतन कियो इह अंत ॥ हालाहल सब कूपमंझार। डरवायौ तानैं रिस धार ॥ तब याके सब जनसमुदाय। पीवत पय ज्वर अधिक लहाय। रुष्टित मन ह्वै कर परधान[1]। फिर कर आये अपने थान ॥ रूपवतीधात्रीजल जोग। लावत ही सब भये निरोग। जैसे श्रीगुरुवचनप्रसाद। ततछिन नासै मिथ्यावाद ॥ अब यह उग्रसेन नरपाल। क्रोध अनिलकर तन परजाल ॥ घनापिंगल राजाकी ओर। चढि चालौ बहु सेना जोर ॥ तिस कूपनको पीवत वार[2]। सबके ज्वर उपजौ अधिकार। तब नरपति ह्वै चित्त उदास। फिर कर आयो निज आवास[3] ॥

दोहा

नरपिंगल मंत्री कह्यौ, सेठसुता विरतन्त।
सुनकर चित्त हर्षित भयो, उग्रसेन बहुमन्त ॥
निज पीडाके नाशकौ, जल मांगौ ता पास।

१ मंत्री। २ पानी। ३ घर।

सेठानी भयकरि तबै, सेठ प्रती इमि भास ॥

रोला।

हे स्वामी इस सुतातनौ मंजनकौ पानी।
क्या नृप शीसमंझार, अब डारन बुधि ठानी ॥
कहै सेठ नारि, नृपति पूछै जो अब ही।
सांच सांच कह देहुं, झूठ बोलूं नहिं कब ही ॥
अहो सन्त जन सत्यरूप बोलैं वायक[1]।
तिनके कबहूं दोष, नहीं उपजै दुखदायक ॥
इमि दंपति[2] करि मंत्र, सुताके न्हौनतनौ पै[3]।
भेजो धात्री हाथ, गई सो नृपति पास लै ॥
तिस सलिलको लेय नृपति, निज सीस लगाया।
परसत ही तत्काल भई, तिस निरमल काया ॥
रूपवतीतैं सब वृतान्त पूछौ नरनायक।
इसने कन्याचरित कह्यौ, सब ही सुखदायक ॥
ताही छिन नररक्ष, सेठको तुरत बुलायो।
धनपति सुनत प्रमान, तबै राजा ढिंग आयो ॥
कीनो बहु सन्मान, कही पुत्री निज दीजै।

१ वचन। २ पुरुष और स्त्री ने। ३ पानी।

कह्यो सेठ मैं देहु, काम जो इतने कीजै ॥

सोरठा ।

स्वर्गमोक्षसुखदाय, अष्टाह्निक पूजा भली ।
पंचामृत भरवाय जिनमज्जन नित प्रति करो ॥

दोहा ।

जो जन कारागारमें, पंछी पिंजरेमाहिं ।
इनको वेगि छुडाइये, हे पृथ्वीपाति नाह ॥
तो अपनी तनुजा विमल, रूपभागदुतिवान ।
तुमको देऊं वेग ही, कुलदीपिका महान ॥

चौपाई ।

नृप तब इम वच किये प्रमान । फिर विवाहको उत्सव ठान । परनी सेठ सुता अभिराम । नामवृषभसेना गुणधाम । दीनो पटरानी पद सार, सुखसौं तिष्ठे निज आगार ॥ नृपने सब कारज दिये त्याग । याहीतैं क्रीडा अनुराग ॥ अब यह वृषसेना धर्मज्ञ । करै सदा जिनन्हौंन सुयज्ञ ॥ अरु निरग्रंथ गुरुनको देत । दान बहुतविधि भक्तिसमेत ॥ सदा शील पाले बडभाग । धरमी जनतैं धारत राग ॥ अहो धर्मवंतनकी

सेव । बहु फलदायक है स्वयमेव ॥ ऐसैं जगत पूज जिनधर्म । पालत तिष्ठै जुतशुभकर्म ॥ इस अंतर काशीको राय । पृथ्वीचंद महा दुठभाय ॥ थौ इनके बंदीगृह बीच । ताको नहिं छोडौ लख नीच ॥ अहो दुष्ट जे जीव अयान । कभी बंधत नहीं छुटान ॥ नारायणदत्ता तिस नार । तानैं मंत्र सु येम विचार । छुडवावनकौ अपने कन्त । करत भई शाला इह भन्त ॥

दोहा ।

वृषसेनाके नामतैं, बांटै बहुविधि दान ।
विप्र आदि बहु जननको, करके बहु सन्मान ॥
दान लेयकर बहुत जन, इस पत्तनमें आत ।
निज मुखतैं धात्री सुनी दानतनी सब बात ॥

चौपई ।

रूपवती सुनत बहु भन्त । चितमें करके रोष अत्यंत ॥ कन्यासौं इम भाषी जाय । तैं मम पूछे विन किह भाय ॥ दानतनी शाला अधिकाय । कीनी वानारसि केमांय ॥ कहै वृषभसेना सुन मात । मैं नाहीं कीनी यह बात ॥ मेरो

नाम लेय जन कोय। बांटत है चित हर्षित होय।
ताकी खबर मंगावो बेग । ज्यों नासै मनको उ-
द्वेग ॥ रूपवती धात्रीने तबै । हलकारन प्रति
पूछी सबै । उन भाष्यौ सब दानवृतांत । इन
कन्याप्रति चयौ तुरंत ॥ तबै वृषभसेना सुन
येह । पहुंची नृपपै हर्षित देह । शीघ्र छुडायौ
पृथ्वीचंद । तब तिन पायौ बहु आनन्द ॥४५॥

दोहा ।

अब इस पृथ्वीचंदने, याकौ पट लिखवाय ।
तिस चरननमें सिर धरत, अपनो भाव दिखाय ।

पद्धरी ।

पीछे वो पट लेकर रिसाल । इनकौं दिख-
लायौ नाय भाल ॥ वृषसेनातैं इम वच उचार,
हे देवी तुम मम मान सार ॥ तुमरे प्रसाद मम
जन्म येह । अब सुफल भयौ है विन सन्देह ॥
इम सुन नृपातिय संतोष पाय । राजातैं बहु
सनमान चाय ॥ याकौं आज्ञा दिलवाय दीन ।
धनपिंगलपै जावो प्रवीन । यह सुनके पृथ्वी-

चन्द राय। पहुंचौ निज नगरीमाहिं जाय ॥ अब सुनी मेघपिंगल नरेश। आवै काशीपति मम सुदेश ॥ वह जानत है मम सर्व भेद, ऐसैं निश्चय कर धारि खेद ॥ नृप उग्रसेनके पास आय। हूवौ चाकर निज सीस नाय। जे हैं जन जगमें पुन्यवान। तिन अरी होत मित्रन समान ॥ ५१ ॥

दोहा।

इस अन्तर इक दिनविषैं, उग्रसेन नरनाय ।
यह विधि परतिज्ञा करी, बहुविधि मन हरषाय ॥

अडिल्ल।

जो आवै मम भेट तासु मधतैं कही। आधी धनपिंगलकौं देऊंगौ सही। अर्ध भेट पटरानी यामैं तैं लहे। इह विधतैं नृप वचन आप मुखतैं कहे ॥ ५३ ॥

एक दिना माणिकमबलु जुग आवत भये। एक एक तब दोनोंकौं नृपने दये। अहो वचन जे जगमें पंडित कहत हैं। ते धन माणि कंचनमें चित नहिं धरत हैं ॥ ५४ ॥

जोगीरासा।

एक दिना घनपिंगलकी तिय, रूपवतीपे आई। मणिकंबल ओढे सिर ऊपर, तहां प्रमादवसाई॥ पटरानीको वो मणिकंबल, बदल गयौ तिह वारी। देखो कर्मतनी गति अद्भुत, टरत नहीं है टारी॥ अब यह घनपिंगल एकै दिन, नृपकी सभामझारी। आयो वो मणिकम्बल ओढैं, राय लखौ ततकारी॥ क्रोध अनिल कर तप्त भयौ तन, पटघृतजोग लहाई। ऐसे लख कर यह घनपिंगल, भाग गयो भय खाई॥ ५६॥

चौपई।

अब यह उग्रसेन नरपाल। क्रोधयुक्त कीने चख लाल॥ सब सुधि बुधि तिस गई पलाय। सती वृषभसेना बुलवाय॥ तब ही डारी वारिधि बीच। हेयाहेय न जानी नीच॥ अहो मूढ जनको धिक्कार। क्रोधप्रभाव तजै सुविचार॥ जब यह सती उदधिमें परी। ऐसी विधि परातिज्ञा करी॥ इस उपसर्ग थकी मैं बचूं।

तो चूतिकापद निश्चय रचूं ॥ ताही छिन इस शीलप्रभाय। जलदेवी तहं पहुंची आय ॥ भक्तिसहित विष्टरपै थाप। चवंर ढोरि जै जै आलाप ॥ अहो भव्य अचरज क्या एह। शील महा सुर-शिवपद देह ॥ अगनि होत है सलिलसरूप। उदधि महा थल होय अनूप ॥ शत्रु होय निज मित्र महान। हालाहल है सुधासमान ॥ सुयश सदा फैले चहुं ओर। पुन्य सम्पदा व्यापै जोर॥ तातैं पापहतन यह शील। पालौ बुधजन करौ न ढील॥ श्रीजिनेन्द्रने इम उचरौ। मनरूपी मरकट वश करौ॥

दोहा।

नारि वृषभसेनालनो, ऐसे सुन विरतंत।
ताके ढिंग जातौ भयौ, पश्चाताप करंत॥

सवैया इकतीसा मनहर।

तब ही वो सती सार मनमें वैराग धार,
गई ततकार वनमांहिं मुनि पासजी। गुणधर

---

१ सिंहासन पर।

नाम तासु अवधि धरैं प्रकाश, तिन पद नमि
इम करी अरदास जी ।। अहो जगवंद दयावा-
रिध सुगुणवृन्द, किये कौन काज मैने सुखदु-
खरासजी । पूरव वृत्तांत सब कहौ कृपाधारी
अब, मूरतीक गेय जेते रहे तुम्हैं भास जी ।।

दोहा ।

तब मुनिनायक इम कही, सुन पुत्री चितलाय
पहिले भव इस देशमें, तू द्विजकन्या थाय ।।

चाल मेघकुमारकी दसी ।

नागश्री तुझ नाम था री, नृपके देय बु-
हारि । देत सोहनी तू सदा री, ये ही था अ-
धिकार, री पुत्री तू मिथ्या मतिलीन ।। एक
दिना मंदिरविषैं जी, आये श्रीरिषिचन्द । मु-
निदत्त नामा जगपती जी, तपमंडित गुणवृंद
सयानी सुनिये चित्त लगाय ।। मंदिरके पडको-
टमें जी, वायुरहित लखि गर्त । तामैं संध्याके
समय जी, आतमध्यान सुकर्त । सयानी तिष्ठ
मौन सुधार ।। हे पुत्री तैं रोसतैं री, धरि अ-

ज्ञानकुभाय । कहत भई यहांतैं नगन तू, अब-
हीं वेग पलाय, रे जोगी आवेगौ नरनाय ॥
मैं पृथ्वी निरमल करूं रे, इहविधि वचन क-
ठोर । तैं भाषे तौ भी तजी ना, श्रीगुरुने वह
ठौर ॥ सयानी तिष्ठे मेरु समान ॥ फिर तैं चित
न विवेकतैं री, क्रोध करौ अतिकार । सब ही
रेत वुहारिके री, मुनिके सिरपै डार ॥ दियौ
तैं, तब तिन समता कीन ॥

दोहा ।

अहो जगतकर पूज जे, श्रीमुनि दीनदयाल ।
तिनपैं कूडौ डारनौ, जोग नहीं थौ बाल ॥

सोरठा ।

जगमें दुखदातार, मूढनकी कुतासित क्रिया ।
ताको है धिक्कार, आचारज ऐसे कहैं ॥

चौपाई ।

इस अन्तर नृप होत प्रभात । देवथान आयौ
हरसात । गर्तमांहिं मुनिस्वासप्रभाय । तृणकौ
पुंज हलत लखि राय ॥ तहां आय देखे ऋषि-

चन्द । शीघ्र निकासे जुतआनन्द ॥ तव मुनि-वर समताके गेह । तैं लखके मन धरौ सनेह ॥ निंदा अपनी तैं सत्कार । कीनी तित ही वार-म्बार ॥ धर्मविषैं बहुविधि रुचि धरी । मुनिकी निरमल काया करी ॥ पीडा शांति अर्थ बड-भाग । औषधदान दियो जुतराग ॥ फिर कीनों वैयावृत सार । सब कलेशकौ मेटनहार ॥ हे पुत्री तहंतैं तज प्रान । तू उपजी तिस पुन्यप्र-मान । धनपति सेठ धनश्री गेह । नाम वृषभ-सेना वृषनेह ॥ हे बाले! तैं औषधदान । दियो विशेष चित्त हरषान ॥ ताकर सर्व औषधि रिद्ध, तैं पाई यह जग परसिद्ध ॥ हे मुग्धे! मुनि सिर कतवार । तैं डारौ जो बहु रिस धार । तिस अघतैं नृपकर चित बंक । अम्बुधि डारी देय कलंक ॥

दोहा ।

तातैं नित प्रति कीजिये, साधु सेव मनलाय ।
पीडा कबहुं न दीजिए, जो सुख चाह अथाय ॥

पद्धरी।

यह जग आतापहरन सुवैन । सुनके इन पायो परम चैन ॥ वैरागमाहिं चित धारि स्वच्छ । धरमम्ला त्यागि नृपादिपच्छ ॥ गणधर मुनि-के चरननमंझार । वहु विधितैं करके नमस्कार ॥ संसारदुष्टनाशक प्रचंड । जिनदीक्षा तब लीनी अखंड ॥ हां भव्य महा औषध सुदान । यानैं दीनौं बहु भक्ति ठान ॥ तैसे तुम भी पात्रन महान । भेषज दीजे नित वित समान ॥ यह गणधर मुनि भाषौ चरित्र । सो जगप्रसिद्ध अति ही पवित्र ॥ ताको सुनिकर भवि जीव जेह । जिनभाषित तपतैं करो नेह ॥

दोहा।

सती वृषभसेना महा, भई जगतपरसिद्ध ।
सो हमको मंगल करौ, दीजे बहु सुख रिद्ध ॥
औषधिदानतनी कथा, पूरन कीनी येह ।
भव्य जीव बांचो सुनौ धरके बहुविधि नेह ॥

इति औषधि दानकथा ।

अथ ज्ञानदान कथा

मंगलाचरण ।

गीता छंद ।

इस जगत वारिधतैं उधारनहार श्रीजि-नदेवजी । तिनके चरनअम्बुज नमत हूं ठानके बहु सेव जी ॥ अरु मात्त सरसुतिको जजूं जि-नवदनतैं उतपन भई । अज्ञानपटलविनाशनी अंजनशलाका सम कही ॥ हैं मोहविजयी जे नगनगुरु, रतनत्रयभूषित सदा । तिन चरन श्रीके गेह सम, तिनकौं नमत हूं है मुदा । अब कथा शास्त्रसुदानकेरी, सुनौ भवि चित लायकैं । सब जगतको आनन्ददायक, देत बोध बढा-यकैं ॥

दोहा ।

सब जीवनके नेत्र सम, ज्ञानदान सुखकार ।
पात्रनको नित दीजिये, या सम और न सार ।

चौपाई ।

इसही ज्ञानतने परभाव । प्रानी निर्मलकीर्ति लहाव । मुक्ति भुक्ति पावै सो जीव । नाना विधि

सुख लहै अतीव ॥ सोई सम्यकज्ञान महान । श्रीजिनेन्द्रकरि भाषित जान ॥ रहित विरोध धरैं जे चित्त । ते पावैं कल्याण सु नित्त ॥ ताको आराधो इह भंत । दान मानकरि पूजि अत्यंत ॥ कर प्रभावना बहु विध सार । पाठन पठनथकी अतिकार ॥ ज्ञान प्रभावना है स्वाध्याय । पंच प्रकार जान चित लाय । वांचन पूछन अरु अनुप्रेश । आमनाय धर्मोउपदेश ॥ बहुत कहनतैं कारज कौंन । ज्ञानदान है सुखत्रयभौन ॥ तातैं भविजन केवलहेत । शास्त्रदान द्यो हिये सुचेत ॥ इस ही दानतने परसाद । भये बहुत जन अव्याबाध ॥ तिनके नाम कथनके जोय । इस जगमें समरथ नहिं कोय ॥ अब इस ही प्रस्तावमझार । कहूं कथा जिनश्रुतअनुसार ॥ नृप कौंडेश दयौ यह दान । ताकर भये प्रसिद्ध महान ॥

अडिल्ल ।

अब इस अंतर भरतक्षेत्र सुखदायजी । जैन धर्मकरि अति पवित्रता पायजी । तामें

कुरुमरि ग्राम अधिक सुन्दर लसै। गोविंद नाम ग्वाल तासके मध वसै॥

एक दिना यह ग्वाल गयौ वनमें सही। तरुके कोटरमाहिंथकी पुस्तक लही। भक्तिसहित श्रीपदमनन्दि मुनिको दई। कैसे हैं मुनिचंद सार सुखकी मही॥

दोहा।

पहिले इस ही ग्रंथको, बडे बडे ऋषिराय।
पढि पढि परभावन विविध, करवाई अधिकाय॥
फिर पूजा करवायके, तिस ही थानमझार।
थापन करके जगतगुरु, करत भये सुविहार॥

काव्य।

तैसे ही श्रीपद्मनंदि मुनिवर विधि ठानी।
पुस्तक कोटरमध्य थाप कियौ गमन सुज्ञानी॥
कैसे हैं मुनिराय पापमयपंक[1]पखालन।
ज्ञानध्यानकर युक्त, सकल अच्छ[2]नमद गालन॥
अब यह गोविंद गोप, बालपनतैं चित देकर।
तिसी ग्रंथकी करा करै, पूजन बहु नुतिकर॥

---

१ कीचड। २ इन्द्रियोंका मद।

कितने दिनमें काल व्यालने गरसो याकौं ।
प्रानहरन यमराज कहौ भक्षौ नहिं काकौं ॥
करके मरो निदान पुन्यतें उपजो जाई ।
ग्रामकूटके पुत्र महा सुन्दर सुखदाई ॥
एक दिना फिरि पदमनंदि मुनिके पद भेंटे ।
जातीसुमरनज्ञान पाय अघसंचित मेंटे ॥
मुनिके चरनसरोज नमूं, यह धर्मराग पग ।
कीने निरमल भाव, लई दीक्षा तिनके ढिंग ॥

दोहा ।

अब यह मुनि तन त्यागके, भयौ राय कौंडेश
अपने बलतैं अरिजिये, रवितैं तेज विशेष ॥

चौपई ।

द्युति करके कंदर्प समान । कांति लई शशिकी उनमान । विभौयुक्त सुखतनौ निवास । कीरति चहुं दिस रही प्रकाश ॥ नाना विधिके भोग करंत । परजा सुतवत पाले संत । जिन भाषित वृष च्यार प्रकार । करतो तिष्ठे निज आगार ॥ ऐसे सुखसो काल वितीत । होत भयौ इनकौ इह रीत । फिर कोई कारण नृप

देख। भवतैं विरकत्त होय विशेख ॥ २२ ॥ मन में इह विधि कियो विचार । परतछ यह संसार असार ॥ भोग रोग सदृश दुखदाय। सम्पत्ति चपलावत नस जाय ॥२३॥ तन मलीन मल- मूत्र जु गेह । अशुच अपावन नासै येह ॥ इह विधि वह बुधवंत नरेश् । मनमें कियो विचार विशेष ॥२४॥ मनवचकाय राजकौं त्याग । फिर जिन अर्चा करि बडभाग ॥ गुरुके पदपं- कज सिर नाय । दोषरहित तप ग्रहन कराय ॥

दोहा ।

पूरव पुन्य प्रभावतैं. श्रुतकेवलि पद पाय ।
यामैं अचरज कौन है, ज्ञानदान शिवदाय ॥२६॥
जैसैं यह रिषि ज्ञाननिधि, भये दानपरभाय ।
तैसैं तुम भी हित करो, दान देहु अधिकाय २७

छप्पय ।

जे भविजन प्रभुज्ञान, तनी सेवा मन आनैं ।
कर कलशाअभिषेक, बहुरि पूजा विधि ठानैं ॥
स्तवन जपन विधि करैं पठन पाठन अधिकाई ।
लिखन लिखावन शास्त्र, दानैं सनमान कराई ॥

अरु करैं प्रभावनअंग जे, भक्तिसहित भवि है मुदा
हैं ये ही अंग सम्यक्त्वके, कोडों सुखदाता सदा।

सवैया तेइसा (मत्तगयन्द।)

ज्ञान पसाय लहै धन-धान्य, सुसुन्दर मंगल अन्तिम पावै। ऊंच कुली धरि गोत्र पवित्र जु, निर्मल ज्ञानरमा घर आवै॥ दीरघ आयु लहै सुखदायक, सर्वमनोरथसिद्धि लहावे। और कहै अब कौन भला, इस दानतैं मोक्ष अंकूर उगावै॥

दोहा।

तातैं दोषरहित प्रभू, तिन जो कियो बखान।
तिसको सम्भावन करो, ज्यौं पावौ कल्यान॥
ज्ञानदानकी कथा शुभ, मन भाखी एहु।
सो मुझको अरु भविनकौं, केवललक्ष्मी देहु॥

कवित्त।

शोभित श्रीवर मूलसंघ जो, तामैं गच्छ भारती जान। श्रीभट्टारक हैं मल्लिभूषण, रतनत्रय करि दिपत महान॥ तिनके शिष्य ब्रह्म नेमीदत्त, श्रीजिनके अनुसार बखान। दान-

कथा यह भव्य जननकौं, शान्तिअर्थ हूजौ अधिकाल ॥

इति ज्ञानदानकथा ।

अथ अभयदान कथा ।

मंगलाचरण ।

दोहा ।

शोभामंडित जिन विमल तिनपद नमि सुखकार
अभयदानकी कहत हूं कथा सूत्रअनुसार ॥ १ ॥

कडखौ छन्द ।

बहुरि श्रीशारदामायको ध्यायके, जासको भव्यजन जजत सारे । होहु कल्याणके अर्थ मोकौं अबै, जास परसादतैं, सब लिहारे । शास्त्रवारिधि महा तासके पारको, करन नवका भली तू उदारे । जिनमुखोत्पन्न तैं भई परगट सही, अबै आ कंठ तिष्ठौ हमारे ॥

गीता छन्द ।

जे ग्रहकर शोभित सिरीगुरु, मूलउत्तर गुण धरैं । तिनकौं जजूं हित धारके, जे शांति

बहु विधिकी करैं ॥ तिनकी भगति निश्चय-थकी, सुख श्रेष्ठमारग देतु है । भवदधि विषम-तैं पार करनैं,–को यही वर सेतु[1] है ॥

दोहा ।

ऐसे मैं गुण आसके, सुमरन करि अधिकाय ।
अभयदान दृष्टान्तकी, कथा कहूं हितकाय ॥

चौपाई ।

ये ही भरतक्षेत्र दुतिवंत । धर्मकर्मकर परम दिपंत ॥ तामधि सोहत मालवदेश । बहु शोभा कर लसत विशेष ॥ धनकनकर मंडित है जेह । सम्पतिकौ जानौ शुभ गेह ॥ जग जन-को लक्ष्मी दातार । वन उपवनकर शोभितसार । सरिता बहै महारसभरी । भूभृत[2] सोहैं मानौं करी[3] ॥ कमलनिकर शुभ भरे तडाग । तिनकौ षटपद[4] लहत पराग ॥ देवनकौं प्यारौ अधि-काय । तहां रमत हैं नित प्रति आय ॥ नर नारी तहं अति दुतिवंत । पुन्य उदयतैं सुख विलसंत ॥ तिस ही देशविषै अभिराम । ठांव

---

१ पुल । २ पर्वत । ३ हाथीसरीखे । ४ भौरा

ठांव शोभैं जिनधाम ॥ ग्राम ग्राम परवतके भाल । ऊंचे शिखर जु दिपैं विशाल ॥ तिनपै कलश महा दुतिवान । चामीके[1] चमकैं अधिकान ॥ तापर धुजा महा लहकंत । मानौं बुलवावत विहसंत ॥ भव्य जननकौं दर्शनहेतु । शुभ पथ दिखलावैं वे केतु[2] ॥ जिन आगार लखत तत्कार प्रानी पाप करैं परिहार ॥ अहो कौन वरनै अधिकार । जामें मुनि नित करत विहार ॥ रत्नत्रयभूषित तपगेह । शिवपुरमें धारत हैं नेह ॥ तिसही देशविषैं जिनधर्म । सुखदाता वरतत है पर्म ॥ कैसौ वृष सम्यक्तनगयुक्त । पूजादानवरतसंयुक्त ॥ तिस ही देशविषै जिनचंद । तिष्ठत हैं आनंदके कंद ॥ दोष अष्टदशरहित दयाल । गनधरनायक जग रिछपाल ॥ अरु तहंके जन सम्यकवंत । सो दरशन जानौं इह भंत ॥ देवधर्म गुरुकी परतीत । सत तत्त्वनकी जानत रीत ॥ जिनवर जज्ञ[3] करैं चितलाय ।

---

१ । सोनेके । २ धुजाएं । ३ पूजा

स्वर्गमोक्ष सुखके जो दाय ॥ भक्तिसहित पा- त्रनको दान। देवैं नित भक्ति वित्तसमान ॥ शील वरत धारैं उपवास। इत्यादिक वृष जो गुणरास। ताको पालैं पंडित संत। सोई सम्यक्त्ववंत महंत ॥ ऐसी शोभाजुत कह देश । ता महिमा कह सके न शेश ॥ तामधि सोहै सम्पतिधाम । सुंदर भट नामा एक ग्राम ॥

दोहा ।

कुम्भकार देवल रहै तामधि बहु धनवान ।
अरु धर्मिल नायकमहा कुत्सित तिस ही ठान
इन दोनोंने सीरमैं, बनवायौ इक गेह ।
पथिक जननकौं तासमैं, उतरावैं कछु लेह ॥

पद्धडी ।

इकदिन यह देवलजुत कुलाल । उस था- नकमें श्रीमुनि दयाल ॥ वृषहेत उतारो हरष- वंत । फिर चलौ गयौ कित ही तुरंत ॥ तब ध- र्मिल चितमें धर कुभाय । इक परिव्राजकको वेगि लाय ॥ श्रीमुनिकौं तो दीनौं निकार ।

ताकौं उतरायौ तिसमंझार ॥ है सत्य बात यह जगतबीच । जे पापी दुष्ट अयान नीच ॥ तिनकौं प्यारे लागैं न संत । जिम रवि लखि घूघू रोषवंत ॥ अब इस थानकको तजि मुनीश । इक तरु लखि तिष्ठे जगतईश । तनतैं निष्प्रेही सुगुणमाल । रवि शशि खग इंद्र नमंत भाल ॥ बहु शीत उष्ण आदिक प्रचंड । सब सहै परीषह ध्यान मंड ॥ अब देवल तरुतल मुनि निहार । अरु इन तनौं कारन विचार ॥ तिस नायकपै है क्रोधवंत । तासेती युद्ध कियौ अत्यंत । इन रुद्र भावतैं मीच लीन । विंध्याचलपै उपजे मलीन ॥

दोहा ।

कुम्भकार सूकर भयो, काया पाई पुष्ट ।
नायक व्याघ्र तहां हुवौ, जन्तु हनै यह दुष्ट ॥

चौपाई ।

तिस परवतकी गुफामंझार । जुग चारन मुनि करत विहार ॥ नाम समाधिगुप्त त्रयगुप्त । तिष्ठे ध्यान धारि जिनभक्त ॥ कैसे हैं रिषिचंद

दयाल। धीर वीर सबजगरिछपाल ॥ पृथ्वी-तलको करत पवित्त। क्षमावंत अति ही शुभ-चित्त ॥ अब वो सूकर तित ही आय। देखत जाती-सुमरन[1] पाय ॥ श्रीजिनवरका व्रत सुनि सार। किंचित व्रत किये अंगीकार ॥ अरु वो व्याघ्र दुष्ट विकराल। मानुषगंध सूंघि तिस काल ॥ मुनि सन्मुख निज आनन फाडि। आयौ ततछिन दुष्ट दहाडि ॥ जब वो सूकर होय सचेत। मुनि रक्षा करनेके हेत ॥ गुफातनैं गोपुरके द्वार। तासौं युद्ध कियौ विकरार ॥ रदन दशन अरु नखतैं सही। भयो युद्ध जो जाय न कही ॥ फिर दोनों तजकै निज प्रान। गति पाई निज भावसमान ॥ सूकर तो निज पुन्यवसाय। प्रथम स्वर्गमें सुरपद पाय ॥ अणिमादी रिधि लही अत्यन्त। तमनाशक तन अतिदुतिवन्त ॥ भागवन्त आवत जुतदेव। लखकैं जन हरषैं स्वयमेव ॥ सुन्दर पट भूषण

१ जातिस्मरण ज्ञान

धारंत । कंठविषे वर दाम दिपन्त ॥ कल्पवृक्ष की दुति परिहरै । अवधिज्ञान चख निरमल धरै ॥ दिव्य सौख्य देवांगन संग । नितप्रति भोगै भोग अभंग ॥ बहुत अमर आज्ञा फिर धरैं । तिस महिमा किम वरनन करैं ॥ जिनवर चरन कमलकी दास । पूजन करै धार उल्लास ॥ कृत्रिम अकृत्रिम श्रीजिनधाम । अरु श्रीजिन-प्रतिमा अभिराम ॥ अथवा तीर्थंकर साक्षात । तिनकौं बन्दे पुलकित गात ॥ दुर्गतिनाशक सिद्धसुखेत । यात्रा ठानै हर्षसमेत ॥ महामुनी की भक्ति करंत । संतनतैं वात्सल धारंत ॥

दोहा ।

ऐसे सुख भोगत सदा, अभयदानपरभाव ।
तिस महिमा जगके विषै, को कवि कहै बनाय ॥

रोला ।

ऐसे श्रीजिनकथित, धर्म ताके प्रसाद कर ।
भव्यजीव सब थानविषैं, सुख लहै अतुलवर ॥
सो किहिविधि है धर्म, जिनेश्वरअरचा करनी

पात्रनको अन-दान सुव्रत, किरिया अघहरनी
तिथि औसर उपवास यही वृष हिरदे धारौ ।
सो कल्याणनिमित्त सिरीजिनने उच्चारौ ॥

दोहा ।

अब वह पापी व्याघ्र जो, कुत्सित दुष्ट अज्ञान ।
मुनिभक्षणमें भाव कर, छोड दिये निज प्रान ।
तिसी पापपरभावतैं, गयौ नरकके बीच ।
ताडन मारन आदि बहु, सहित भयौ वह नीच

सोरठा ।

तातैं भविजन जान, पुन्य पापको फल अफल
श्रीजिनवृष उर आन, सदाकाल ताकौं भजौ ॥

रोला ।

श्रीसम यह शुभकथा, जगतमें हो प्रसिद्ध अति ।
श्रीजिनसूत्रमंझार कही, गणनायकजी सत ॥
अभयदानसंयुक्त, पात्र भेदनकरि जानौ ।
परम सौख्यसुस्थान, पापनाशक पहिचानौ ॥

इति अभयदानकथा ।

मुद्रक—

श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ,

जैनसिद्धांतप्रकाशक (पवित्र) प्रेस

कलकत्ता ।